1.कानूनी तकनीक में विशेषज्ञता
2.वैकल्पिक विवाद समाधान में भूमिका
3.कॉर्पोरेट कानूनी सेवाओं का विस्तार
4.अंतर्राष्ट्रीय कानूनी सेवाओं में भागीदारी
5.कानूनी उद्यमिता में अवसर

चुनौतियां और सीमाएं

यह अध्ययन निम्नलिखित सीमाओं के साथ किया गया है:

भौगोलिक सीमा:

मुख्यतः शहरी क्षेत्रों पर केंद्रित

आर्थिक वर्गीकरण:

विभिन्न आर्थिक पृष्ठभूमि की महिलाओं का समान प्रतिनिधित्व नहीं

क्षेत्रीय भिन्नताएं:

विभिन्न राज्यों और क्षेत्रों की विविधताओं का पूर्ण समावेश नहीं

अंतिम विचार

महिला वकीलों में भूमिका संघर्ष एक जटिल सामाजिक मुद्दा है जिसका समाधान केवल व्यक्तिगत प्रयासों से संभव नहीं है। इसके लिए सामाजिक, संस्थागत, और नीतिगत स्तर पर समग्र परिवर्तन आवश्यक है। सामंजस्य की संभावना निश्चित रूप से है, लेकिन इसके लिए सभी स्तरों पर सकारात्मक दृष्टिकोण और सक्रिय प्रयास आवश्यक हैं।

यह अध्ययन दिखाता है कि महिला वकील न केवल अपनी व्यावसायिक सफलता प्राप्त कर सकती हैं, बल्कि न्यायिक व्यवस्था और समाज के विकास में भी महत्वपूर्ण योगदान दे सकती हैं। आवश्यकता है उनके लिए अनुकूल वातावरण निर्मित करने की और उनकी क्षमताओं को पहचानने की।

****

संदर्भ

1. **बार काउंसिल ऑफ इंडिया** (2023). "महिला वकीलों का सांख्यिकीय विवरण"। नई दिल्ली: बार काउंसिल प्रकाशन।
2. **गुप्ता, प्रीति** (2022). "भारतीय न्यायपालिका में महिला सशक्तिकरण"। जर्नल ऑफ लीगल स्टडीज, 15(3), 45-62।
3. **शर्मा, रीता** (2021). "कार्य-जीवन संतुलन: महिला वकीलों का अनुभव"। इंडियन लॉ रिव्यू, 28(4), 123-145।
4. **मेहता, अनिता** (2023). "भारतीय कानूनी पेशे में लैंगिक चुनौतियां"। सामाजिक न्याय पत्रिका, 12(2), 78-95।
5. **पटेल, संध्या** (2022). "महिला अधिवक्ताओं की व्यावसायिक यात्रा"। लॉ एंड सोसाइटी जर्नल, 19(1), 34-56।
6. **खान, फातिमा** (2021). "न्यायालयों में महिला प्रतिनिधित्व: एक विश्लेषणात्मक अध्ययन"। कानूनी अनुसंधान पत्रिका, 7(3), 89-110।
7. **सिंह, प्रियंका** (2023). "डिजिटल युग में महिला वकीलों के अवसर"। टेक्नोलॉजी एंड लॉ क्वार्टरली, 5(2), 67-89।
8. **राजू, सुमित्रा** (2022). "पारिवारिक सहयोग और महिला वकीलों की सफलता"। फैमिली एंड सोसाइटी जर्नल, 11(4), 156-178।
9. **जोशी, माधुरी** (2021). "महिला वकील संगठनों की भूमिका"। कलेक्टिव एक्शन स्टडीज, 8(1), 23-45।
10. **नायर, लक्ष्मी** (2023). "न्यायिक सुधार और लैंगिक संवेदनशीलता"। जुडिशियल रिफॉर्म जर्नल, 14(2), 101-123।
11. **अग्रवाल, सुनीता** (2022). "कानूनी शिक्षा में महिला छात्राओं की चुनौतियां"। एजुकेशन एंड लॉ रिव्यू, 6(3), 45-67।
12. **भट्ट, उर्मिला** (2021). "सामाजिक परिवर्तन और महिला न्यायाधीश"। सोशल चेंज जर्नल, 9(4), 89-112।
13. **वर्मा, निशा** (2023). "ग्रामीण क्षेत्रों में महिला कानूनी सेवा प्रदाता"। रूरल डेवलपमेंट एंड लॉ, 4(1), 34-56।
14. **चौधरी, गीता** (2022). "महिला वकीलों के मानसिक स्वास्थ्य पर अध्ययन"। मेंटल हेल्थ एंड लॉ जर्नल, 3(2), 78-95।
15. **मिश्रा, रेखा** (2021). "न्यायपालिका में लैंगिक भेदभाव: एक अनुभवजन्य अध्ययन"। एम्पिरिकल लीगल स्टडीज, 12(3), 123-145।

तुलनात्मक साहित्य का विकास-क्रम और अनुवाद की भूमिका

डॉ. सीमा चन्द्रन
सहायक प्राध्यापक
हिन्दी व तुलनात्मक साहित्य विभाग- केरल
केन्द्रीय विश्वविद्यालय, पेरिया पोस्ट, तेजस्विनी हिल्स
-कासरगोड-671325
ई-मेल-seemachandran@cukerala.ac.in मो.-09447720229

प्रस्तावना-तुलना सदियों से चली आ रही व्यावहारिक रूप है जिसे अनुशासन के रूप में मान्यता कुछ वर्षों पहले ही प्राप्त हुई। दुनिया भर में किसी भी चीज़ का अध्ययन तुलना के बगैर कर पाना संभव नहीं। रवीन्द्रनाथ टैगोर ने इसे विश्व साहित्य कहा। अनुवाद की भूमिक तुलना के क्षेत्र में काफी हद तक महत्वपूर्ण है। भारतीय व विश्व की अन्य सभी भाषाओं के तहत अनुवाद के माध्यम से आसानी से साहित्यिक ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है।

बीज शब्द: तुलना, अनुवाद, साहित्य, तुलनात्मक साहित्य, अनुवादक, भाषा।

'जिसमें दो या कई चीजों के गुणों की समानता और असमानता दिखलाई गई हो। जिसमें किसी के साथ तुलना करते हुए विचार किया गया हो, उसे तुलनातमकता के अंदर लिया जा सकता है। किसी विषय के सब अंगों या गूढ़ तत्त्वों का ज्ञान प्राप्त करने के लिए उसे देखना, समझना तथा पढ़ना पड़ता है। किन्हीं दो वस्तुओं या व्यक्तियों का कतिपय समान गुणों के आधार पर पूर्णतया जानने के लिए परीक्षण या तुलना करना पड़ता है।'तुलनात्मक साहित्य' शब्द अंग्रेजी के 'कम्परेटिव लिटरेचर' का ही अनुवाद है। अंग्रेजी कवि मैथ्यू आर्नल्ड ने सबसे पहले सन् 1848 में अपने एक पत्र में 'कम्परेटिव लिटरेचर' पद का उल्लेख किया था। तुलनात्मक साहित्य का आशय है वह विद्या शाखा, जिसमें दो या दो से अधिक भिन्न भाषायी, राष्ट्रीय या सांस्कृतिक समूहों के साहित्य का अध्ययन किया जाता है। दो भाषाओं के साहित्य की तुलना करना इसका मुख्य अंग है। वस्तुतः यह दो या दो से अधिक अलग-अलग भाषा साहित्य को पढ़ने की एक विशेष पद्धति है। तुलनात्मक साहित्य के संबंध में इंद्रनाथ चौधरी लिखते हैं, "हिन्दी में तुलनात्मक साहित्य पर पहली पुस्तक सन् 1982 में मेरे द्वारा लिखित 'तुलनात्मक साहित्य की भूमिका' प्रकाशित हुई थी।

वस्तुतः बीसवीं शती के छठे दशक में डॉ नगेंद्र ने दिल्ली विश्वविद्यालय में एम. ए. हिन्दी के पाठ्यक्रम में 'काम्पोजिट कोर्स' के नाम से एक नया विषय समाविष्ट कर हिन्दी में भारतीय साहित्य के अध्यापन का सूत्रपात किया था।"[1] विश्वकवि गुरुदेव रवींद्रनाथ ठाकुर ने सन् 1907 में 'विश्व साहित्य' का उल्लेख करते हुए साहित्य के अध्ययन में तुलनात्मक दृष्टि की आवश्यकता पर बल दिया। वहीं "सन् 1908 में 'तिरुवाचकम' तथा 'नालडियार' के अनुवाद की भूमिका में जी. यू. पोप ने तमिल भाषा-भाषी विद्वानों से यह आग्रह किया था कि तमिल के इन ग्रंथों के वास्तविक आस्वाद के लिए अंग्रेजी में लिखित धार्मिक कविताओं से परिचित होना जरूरी है। क्योंकि कोई भी साहित्य अपने-आप अलग अस्तित्व बनाकर टिक नहीं सकता।" [2] दो भाषाओं के साहित्य की तुलना के लिए स्रोत और लक्ष्य भाषा का ज्ञान होना जरूरी है। इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए जादवपुर विश्वविद्यालय में सन् 1956 में तुलनात्मक विभाग की स्थापना हुई। साहित्यिक अध्ययन में दो पक्ष होते हैं एक कलात्मक और दूसरा समाज-सांस्कृतिक संदर्भ। दनिया के देशों की सामाजिक संरचना के अनुसार उनकी संस्कृतियाँ भी भिन्न हैं। वहाँ के साहित्य में भाषा के माध्यम से समाज और संस्कृति प्रतिबिंबित होती हैं। दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा

का उच्च शिक्षा शोध संस्थान पहला विश्वविद्यालय था, जहाँ एम. ए. हिन्दी के पाठ्यक्रम में 'तुलनात्मक साहित्य' को स्थान दिया गया। "बहुसंस्कृतिवाद तथा सांस्कृतिक अध्ययन के लिए विभिन्न भाषाओं के साहित्य के अनुवाद की आवश्यकता है और उच्च शिक्षा में इन अनुवादों के प्रयोग के लिए तुलनात्मक साहित्य का ज्ञान नितांत जरूरी है। विशेष रूप से भूमंडलीकरण के इस युग में विभिन्न भाषाओं और संस्कृति के विनियोजन, समागीकरण और सहयोजन के चलते यह और भी अधिक आवश्यक हो गया है कि अंग्रेजी भाषा और पश्चिमी संस्कृति के वर्चस्व को तोड़कर अर्थात भूमंडलीय एक प्रस्तरीय दृष्टि को नकारकर एक नये तुलनात्मक साहित्य की रचना की जाए।" [3] इंद्रनाथ चौधरी ने अपनी पुस्तक के सिद्धांत विवेचन के अंतर्गत कई अध्यायों में अनुवाद सिद्धांत का विस्तार से विवेचन किया है। वे लिखते हैं कि, "आखिरकार अनुवाद ही इस अनुशासन की आधारपीठिका है और आज के संदर्भ में संस्कृति अध्ययन के लिए अनुवाद ने एक बहुत ही महत्वपूर्ण स्थान बना लिया है।" [4]तुलनात्मक साहित्य में तुलनाकार जब तुलना करता है, तब उसे दोनों साहित्यिक भाषाओं के ज्ञान होने के साथ-साथ अनुवादक की भूमिका भी निभानी पड़ती है। अनुवाद संप्रेषण का सशक्त साधन सिद्ध हुआ है। "अनुवाद की वजह से भाषाएं समृद्ध हो रही हैं। किसी रचना का अनुवाद किसी दूसरी भाषा में हो जाता है तो वह रचना अधिक पाठकों तक पहुंचती है। अनुवाद के बल पर रचनाओं का भौगोलिक विस्तार हो जाता है और उक्त भाषा की महत्ता का बोध अन्य क्षेत्र के लोग अनुभव करने लगते हैं। बंगाल के दो लेखक विश्वकवि गुरुदेव रवींद्रनाथ ठाकुर तथा शरतचंद्र चट्टोपाध्याय एवं ऐसे अनेक लेखक अनुवाद के बल पर सारे भारतवर्ष में ही नहीं, विश्व के प्रिय हो गए। उन्हें पढ़कर अन्य लेखकों को अपनी-अपनी भाषा में चिंतन करने की प्रेरणा मिली।" [5] इस दृष्टि से तुलनात्मक साहित्य में अनुवादक की भूमिका महत्वपूर्ण हो जाती है।

भारत जैसे बहुभाषिक राष्ट्र में अनुवाद अपना अलग महत्व रखता है। अनुवाद के माध्यम से पाठक केवल परिवेश से ही नहीं लेखक की मूलचेतना से जुड़ना चाहता है। ऐसे में अनुवादक की भूमिका बड़ी मुश्किल हो जाती है। नीत्शे का कहना है कि भाषा तत्व को जानती है, व्यक्ति को नहीं। इसका अर्थ है भाषा के आगे व्यक्ति का महत्व गौण हो जाता है। भाषा के आगे लेखक भी लाचार है। ऐसे में अनुवादक की स्थिति क्या हो सकी है? एक-दूसरा सवाल यह भी बना रहता है कि एक व्यक्ति कितनी भाषाएं जान सकता है? यहां भाषा का मतलब केवल लिपि से नहीं बल्कि सांस्कृतिक प्रतीक के रूप में समझना है। कोई व्यक्ति जब किसी भाषा को जानने का दावा करता है तब वह उस भाषा-भाषी संस्कृति की हर बारीकियों को जानने का दावा करता है। लेखक दरअसल यही काम करता है। वह भाषा के जरिये संस्कृति को पाठक के सामने इस तरह से प्रस्तुत करता है कि पाठक उस प्रदेश की सांस्कृतिक चेतना को पहचान जाता है। यह काम लेखक के लिए भी आसान नहीं है। तब अनुवादक के लिए कितना कठिन हो सकता है, हम समझ सकते हैं। अनुवाद के समय अनुवादक को अलग-अलग प्रकार की भूमिकाएं निभानी पड़ती हैं। उसे अनेक बातों का ध्यान रखना पड़ता है। जहाँ शब्दानुवाद नहीं हो पाता, वहाँ उसे खासतौर से काव्य के क्षेत्र में भावानुवाद से काम लेना पड़ता है। जब कोई कृति को वह हाथ में लेता है, तब वह उसे एक पाठक की तरह पढ़ता है, उसके सांस्कृतिक मूल्यों को पहचानता है, उसके प्रतीकार्थों को पहचानकर अर्थग्रहण करता है और अंत में उसे कथ्य भाषा में अनूदित या पुर्नस्थापित करता है। लेखक के कार्य से अनुवादक का कार्य कुछ अलग और विशेष उत्तरदायित्वपूर्ण होता है, जहाँ लेखक स्वतंत्र रूप से सोचता हुआ अपने विचारों और भावों को प्रकट करता है। वहीं अनुवादक को कभी-कभी लेखक के विचारों से असहमत होने पर भी उसे उनके विचारों को प्रकट करना पड़ता है। अनुवादक को कृतिकार और कृति की मूल चेतना से सदैव जुड़े रहना होता है। ऐसा नहीं है कि अनुवादक ने किसी कृति का अनुवाद संपन्न कर अपने कर्तव्य की इतिश्री समझ ली। उसे पाठक को भी उस स्तर पर लाने का दायित्व निर्वहण करना पड़ता है। तुलनाकार अनुवाद के द्वारा पाठक को दोनों रचनाओं के साम्य और वैषम्य से अवगत कराकर दोहरी रसानुभूति से जोड़ना है।

दो भाषाओं में जो तात्विक अलगाव रहता है, वह पाठक को ध्यान में नहीं आता, लेकिन अनुवादक उस अंतर को पहचान लेता है। हर भाषा में शब्द, अर्थ अपने परिवेश और प्रकरण आदि के अनुसार अलग-अलग हो सकते हैं। इसलिए अनुवादक को दोनों भाषाओं का व्याकरण, संरचना, कहावतें, मुहावरें, शब्दों के अर्थ आदि का ज्ञान हो वरना अर्थ का अनर्थ हो सकता है। वस्तुतः "श्रेष्ठ अनुवादक को मूल भाषा और लक्ष्य भाषा पर समान अधिकार होना जरूरी है, इसमें भी लक्ष्य भाषा पर अधिक। श्रेष्ठ अनुवादक की यह भी कसौटी है कि वह परावलंबी नहीं होना चाहिए। अनुवादक को मूल कृति से पूरा न्याय करना चाहिए। काव्यानुवाद में और सांस्कृतिकता लिए हुए शब्दों के अनुवाद में कठिनाई उपस्थित होती है। उदाहरण के लिए 'प्रेमचंद के लिए गणित गौरीशंकर था' का अनुवाद Mathematics was very tough subject for Premchand योग्य है, लेकिन गौरीशंकर की अर्थच्छाया very tough में पूरी तरह से व्यक्त नहीं होती है।" [6] इस प्रकार तुलनाकार को द्विभाषी ही नहीं, द्विसांस्कृतिक भी बनना होगा। "संपूर्ण सांस्कृतिक जानकारी प्राप्त करना तुलनाकार के लिए असंभव है, फिर भी अनुवादक के अभ्यास में उसे दोनों कृति की सांस्कृतिक भूमिका से परिचित होना जरूरी है।" [7]

मूल कृति अगर भाषा कर्म पर अवलंबित होगी तो उसका अनुवाद अधिक चुनौतीपूर्ण प्रतीत होगा। लेखक भाषा का जितना अधिक रचनात्मक इस्तेमाल करेगा, अनुवाद उतना ही दुष्कर होगा। कविता एवं अन्य रचनात्मक साहित्य की तुलना में अनुवादक को खुद की गुंजाइश से पार उतरना है। यह काम कठिन अवश्य है, लेकिन अनिवार्य भी है। जॉन फ्लेचर ने ठीक ही कहा है, "संस्कृति के महालय में अनुवाद एक सर्वव्यापक तत्व है।"[8] अनुवादक स्वयं एक अर्थगठन है, एक ऐसी रचनात्मक प्रक्रिया है, जिसमें अनुवाद को लेखक के विश्व में पुनः प्रवेश करना होता है। यह बात कभी-कभी उसके ध्यान से हट जाती है। इसका अर्थ ऐसा नहीं है कि उस मूलपाठ से निष्ठा बनी रहने की चिंता न हो। अनुवादक की अपनी एक मर्यादा भी होती है कि वह मूल रचना को ठीक उसी रूप में रख नहीं पाता। इसका मूल कारण यह है कि एक अनुवादक की अपनी शैली होती है जो उसको प्रतिभा एवं युगचेतना से प्रभावित करती है और दूसरा मूलभाषा और लक्ष्य भाषा का अर्थ और स्वरूप की संरचना शायद समान हो, किंतु वही तो कभी नहीं होती। ऐसी स्थिति में अनुवाद समरूप न होकर समतुल्य बना रहता है। जैसे अंग्रेजी में हम कहते हैं She with me यहाँ She अंग्रेजी में नारी का सूचक है। हिन्दी में इसका अनुवाद होगा 'वह मेरे साथ है' यहाँ वह में स्त्री या पुरुष भी हो सकता है। अतः वह शब्द से मूल अर्थ प्रकट नहीं होता।

आज अनुवाद मानव समाज में ज्ञान विज्ञान के क्षेत्र में सेतु की भूमिका अदा कर रहा है। अनुवादक की उपादेयता जीवन के हर क्षेत्र में असंदिग्ध है। तुलनात्मक साहित्य के अध्ययन में तुलनाकार को अनुवादक की भूमिका निभाते समय अनेक कठिनाइयों का सामना करते हुए अनुवाद को सफलता के स्तर पर पहुंचाना पड़ता है। तुलनात्मक साहित्य में अनुवाद में आने वाली समस्या को अनुवादक हल करने का प्रयास करता है।

तुलनात्मक साहित्य में अनुवादक को अनुवाद का संधान करने में अहम भूमिका निभाना पड़ता है। आधुनिक युग में अनुवाद की महत्ता भूमंडलीकरण के विकास के साथ ही अधिक व्यापक हुई है। विश्व की संस्कृति को हम अनुवाद के माध्यम से आसानी से समझ सकते हैं। ऐसे में अनुवादक की भूमिका को अनदेखा नही किया जा सकता है। अनुवादक का कौशल ही दो संस्कृतियों अथवा दो भाषाओं के बीच पुल बनकर भाषा की बाधा को दूर करता है। अत: अनुवाद के क्षेत्र में अनुवादक की भूमिका महत्वपूर्ण है।

****

संदर्भ ग्रंथ-सूची :-

1. तुलनात्मक साहित्य: भारतीय परिप्रेक्ष्य, इन्द्रनाथ चौधरी, वाणी प्रकाशन, दरियागंज, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 2006, आमुख 7
.2 वही, आमुख 8
.3 वही, आमुख 9
4. वही, आमुख 10
5. तुलनात्मक साहित्य: सिद्धात और विनियोग, डॉ. प्रसाद ब्रह्मभट्ट, यूनिवर्सिटी ग्रंथ निर्माण बोर्ड, गांधीनगर, पृ. 56
6. तुलनात्मक साहित्य भारतीय भाषाएं और साहित्य, संपादक: डॉ. राजूरकर, डॉ. राजकमल बोरा, वाणी प्रकाशन, दरियागंज, नई दिल्ली, पृ. 22
7. तुलनात्मक साहित्य: भारतीय संदर्भ, अनुवादक, संपादक डॉ. चैतन्य जसवंतराय देसाई, यूनिवर्सिटी ग्रंथ निर्माण बोर्ड, गांधीनगर पृ. 107
8. तुलनात्मक साहित्य: सिद्धांत और विनियोग, डॉ. प्रसाद ब्रह्मभट्ट, यूनिवर्सिटी ग्रंथ निर्माण बोर्ड, गांधीनगर, पृ. 89